THE TIMES OF INDIA

Date: 17-11-17

Beware Mobocracy

Deepika Padukone, Sanjay Leela Bhansali and film industry must get protection of law

TOI Editorials

From Shri Rajput Karni Sena roughing up Sanjay Leela Bhansali in January to the Padmavati sets being vandalised in March, it has been clear for many months now that a militant group of protesters was set on making trouble for this ambitious Rs 180 crore extravaganza. Government machinery from Rajasthan to the capital has had plenty of time to squash the thuggery, to make it clear that it stands solidly with the film industry and that only CBFC certifies films in this country. Instead, in a situation sadly reminiscent of how government lethargy allowed Dera Sacha Sauda followers to wreck mayhem in Panchkula, authorities have allowed Padmavati's foes to spread fanatical fires from state to state, north to south.

The upshot is that Karni Sena's Rajasthan president now says they will do to Deepika Padukone what Lakshman did to Shurpanakha, they will cut her nose. In threatening to behead Bhansali, it behaves as an Islamic State spinoff. If IS imitators can sabotage one of the biggest Bollywood releases of the year, involving artists with the most glittering credentials, that too at a time when the industry is struggling against dropping footfalls, it's a ghastly failure of Make in India.

Over in Islamabad the government is set to succumb to religious fanatics demanding the removal of a minister, because a recent law had no reference to Prophet Muhammad. India must not go down this path. But this requires enforcing the rule of law firmly, not indolently. Provisions like the Prevention of Damage to Public Property Act and IPC Section 506, where anyone who threatens to cause death or grievous hurt can be imprisoned up to seven years, should be brought to bear on felons.Unfortunately the opposite message is being sent as the UP government asks I&B ministry to defer Padmavati's release, the Maharashtra tourism minister demands a ban on the film, and Rajasthan's social justice and empowerment minister says it should be cleared by the Karni Sena. I&B minister Smriti Irani must show her mettle now, and do justice by India's hardworking and outstanding film industry. If this cannot be done, then in order to ensure mobocracy doesn't wind Bollywood down entirely Parliament ought to pass a law – call it the 'Protection of Patron Saints of the Indian Republic Act' – that publishes a negative list of revered personalities Bollywood is not allowed to film. That would have the virtue of at least clarifying matters.

दैनिक भास्कर

Date: 17-11-17

समाज के विवेक के लिए चुनौती है पद्मावती विवाद

संपादकीय

पद्मावती फिल्म पर मचे घमासान को देखकर ऐसे कट्टर होते समाज का भय उत्पन्न होता है, जिसके आगे अभिव्यक्ति की आज़ादी जौहर करने पर मजबूर है। 1 दिसंबर को रिलीज होने जा रही इस फिल्म को प्रमाण-पत्र देने का निर्णय केंद्रीय फिल्म प्रमाणन बोर्ड को करना है। बोर्ड के अध्यक्ष प्रसून जोशी ने कहा है कि उन्होंने अभी फिल्म नहीं देखी है और सुप्रीम कोर्ट ने बोर्ड के अधिकार में हस्तक्षेप से मना किया है। ठीक-ठीक किसी को नहीं मालूम नहीं कि फिल्म में क्या है लेकिन, करणी सेना ने रानी पद्मावती के चरित्र और उनके जौहर के अपमान के नाम पर पूरे देश में आंदोलन की धमकी दी है।

नतीजा यह है कि उत्तर प्रदेश सरकार ने भी केंद्र को फिल्म रिलीज होने से रोकने की सलाह दे दी है। विवाद का एक हिस्सा तो इतिहास व मिथक को मिलाकर रचना करने की आज़ादी से जुड़ा है और उसी के साथ जुड़ा है किसी जातीय और धार्मिक समाज के मान-अपमान का सवाल। आमतौर पर हिंदू समाज वैसा कट्टर नहीं रहा है जैसा इस्लामी समाज। यहां अपने देवी, देवताओं पर रचनात्मक स्वतंत्रता असीमित रही है। प्रमाण हैं कालीदास, वाल्मीकि, वेदव्यास और जयदेव के तमाम ग्रंथ। दूसरा पक्ष फिल्म से जुड़ी राजनीति और उससे तैयार दुधारी तलवार की धार का है। इसका एक हिस्सा तो फिल्मकार की रणनीति से जुड़ता है, जो फिल्म के प्रचार के लिए ऐसे विवाद खड़ा करता है।

संभव है कि फिल्म में घूमर नृत्य के दृश्य न ही हों या उससे वैसा आपत्तिजनक न निकले जैसा दावा किया जा रहा है। विवाद का दूसरा पक्ष उस राजनीति से जुड़ता है, जो हर छह महीने पर होने वाले चुनावों में जाति-धर्म की भावनाएं भड़काकर उनका दोहन करना चाहती है। जैसे-जैसे गुजरात चुनाव नज़दीक आ रहा है वैसे-वैसे राजनीतिक ध्रुवीकरण की मांग बढ़ रही है। फिल्म का विवाद उसे बढ़ाएगा। निश्चित तौर पर लोकतंत्र में समाज के हर हिस्से को विरोध प्रदर्शित करने का अधिकार है लेकिन, देखना होगा कि वह विरोध तथ्य पर आधारित है या सुनी-सुनाई बातों पर। उसे कौन कर रहा है? उस विरोध में तार्किकता है या सिर्फ भावुकता है। यह भी देखना होगा कि विरोध प्रदर्शन संविधान में प्रदत्त मौलिक अधिकारों का किस हद तक हनन करता है। पद्मावती पर छिड़ा यह युद्ध इस समाज और उसके संस्थाओं के विवेक के लिए एक चुनौती है। उनका दायित्व है कि उसे समझदारी से निपटाएं।

जनसत्ता

Date: 17-11-17

बाधित अभिव्यक्ति

संपादकीय

पिछले कुछ सालों के दौरान किसी फिल्म को प्रतिबंधित किए जाने को लेकर कई बार प्रदर्शन, यहां तक कि हिंसक घटनाएं भी हुई हैं। आमतौर पर ऐसे विरोध की वजह यह बताई जाती है कि इससे किसी खास समुदाय की भावनाएं आहत होती हैं। लेकिन ऐसे ज्यादातर विरोध की तह में जाने पर पता चलता है कि आपत्ति जताने वाले लोगों ने उस फिल्म को देखा तक नहीं होता है। वे बस सुनी-सुनाई बातों या अनुमान के आधार पर आक्रोश जताने लगते हैं। किसी फिल्म या कलाकृति से भावनाएं आहत होने का आलम यह है कि महज ऐसी आशंका से पाबंदी की घोषणा कर दी जाती है, जबकि उसका कोई मजबूत आधार नहीं होता। गोवा में होने वाले आइएफएफआइ यानी अंतरराष्ट्रीय भारतीय फिल्म महोत्सव में जिस तरह दो फिल्मों- 'एस दुर्गा' और 'न्यूड' को भारतीय पैनोरमा खंड से हटाया गया, वह एक बड़ा सवाल है कि किसी खास सामाजिक समूह की ओर से जताई जाने वाली आपत्ति के बरक्स खुद सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय ने यह फैसला किया।

ज्यादा हैरानी की बात यह है कि इस बारे में मंत्रालय ने आइएफएफआइ की तेरह सदस्यीय जूरी को बताना तक जरूरी नहीं समझा। जाहिर है, मंत्रालय का यह रवैया जूरी के कई सदस्यों को नागवार गुजरा और उसके प्रमुख सुजॉय घोष ने विरोधस्वरूप इस्तीफा दे दिया।इसी तरह पिछले कुछ दिनों से फिल्म पद्मावती को लेकर एक खास जाति से जुड़े संगठनों ने तीखा विरोध जाहिर किया है और उस पर पाबंदी लगाने की मांग की है। पर 'पद्मावती' के मामले में राहत की बात यह है कि उत्तर प्रदेश सरकार ने उसके प्रदर्शन में किसी तरह की बाधा न आने देने का भरोसा दिया है।यह एक विचित्र पहलू है कि एक ओर किसी फिल्म के नाम में 'दुर्गा' जुड़ा होने भर से भावनाएं आहत होने की आशंका खड़ी हो जाती है और उसे हटाने का फैसला कर लिया जाता है, दूसरी ओर इसी तरह की स्थितियों में उत्तर प्रदेश सरकार 'पद्मावती' को संरक्षण देने का भरोसा देती है। जबकि 'एस दुर्गा' और 'न्यूड' नामक फिल्मों की जो कहानी अब तक सामने आई हैं, उसके मुताबिक उन्हें आइएफएफआइ की सूची से हटाने की कोई तुक नहीं बनती थी। 'एस दुर्गा' में पुरुष प्रधान समाज में उत्पीड़न और शक्ति के दुरुपयोग की मानसिकता से लड़ते दुर्गा नामक नायक को दिखाया गया है, वहीं 'न्यूड' में दो महिलाओं के निजी जीवन के संघर्ष और जीवट का चित्रण है।

दरअसल, इस मसले पर अपनी राजनीति चमकाने वाले समूहों का निहित स्वार्थ होता है या फिर भावना आहत होने की दुहाई पर साधारण लोग इस्तेमाल हो जाते हैं। यह विचार करने की जरूरत नहीं समझी जाती कि किसी अभिव्यक्ति या कृति के विरोध से पहले उसके संदर्भ जान-समझ लिए जाएं। लेकिन सवाल है कि सरकारी महकमों या फिर सत्ता संस्थानों की ओर से कला माध्यमों में जो दखल दी जाती है, क्या वहां भी वही लापरवाही बरती जाती है? जबकि इस मसले पर 1989 में ही 'ओरे ओरु ग्रामाथिले' फिल्म के संदर्भ में अपने फैसले में सुप्रीम कोर्ट कह चुका है कि अभिव्यक्ति की आजादी को हिंसा की आशंका की दलील पर बाधित नहीं किया जा सकता। यों भी, एक लोकतांत्रिक समाज में कला माध्यमों में जो कृतियां सामने आती हैं, खासकर सिनेमा में जो दिखाया जाता है, उनके अच्छे-बुरे होने का फैसला दर्शकों के विवेक पर छोड़ दिया जाना चाहिए।

राष्ट्रीय सहारा

Date: 16-11-17

बने सहकार की जमीन

संपादकीय

असियान तथा हिंद-प्रशांत क्षेत्र के देशों के शिखर सम्मेलन में प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने अपनी असाधारण राजनयिक सक्रियता का प्रदर्शन किया। उनके प्रशंसकों के अनुसार दो दिन में लगभग आधा दर्जन राष्ट्राध्यक्षों या शासनाध्यक्षों से उभयपक्षीय वार्ता कर उन्होंने भारत के सामरिक तथा आर्थिक राष्ट्रीय हितों का दूरदर्शी अभूतपूर्व संरक्षण करने का प्रयास किया है। दूसरी तरफ, उनके आलोचकों का मानना है कि यह महज लफ्फाजी है, जिसका मकसद आंतरिक मोर्चे पर आर्थिक संकट के निवारण में नाकामी से नागरिकों का ध्यान बंटाना-हटाना है। यह तर्क बिल्कुल निराधार भी नहीं-नोटबंदी के दर्दनाक नतीजे अब सामने आ रहे हैं, और वित्त मंत्री अरुण जेटली की विश्वसनीयता जीएसटी को उतावली के साथ लागू करने के कारण निश्चय ही नष्ट हुई है। पर गुजरात में चुनाव हो या देश में असहिष्णुता का बढ़ता माहौल आज भी मोदी का व्यक्तिगत करिश्मा काफी हद तक बरकरार है। दक्षिण चीन सागर में चीन के आक्रामक विस्तारवाद की उपेक्षा हमारे लिए घातक साबित हो सकती है। जापान, फिलीपींस, वियतनाम और भारत के हितों में चीन के प्रतिरोध के संदर्भ निश्चय ही बहुत साम्य है। इसीलिए जापानी, वियतनामी प्रधानमंत्रियों तथा फिलीपींस के राष्ट्रपति के साथ मोदी की मुलाकातें महत्त्वपूर्ण समझी जानी चाहिए। पर यही बात ऑस्ट्रेलिया तथा न्यूजीलैंड के नेताओं के बारे में नहीं कही जा सकती। ये मूलत: गोरे देश हैं, जो पहले ब्रिटेन और अब अमेरिका की छतछाया में रहने के आदी हैं। इनसे आशा करना कि आर्थिक हितों के संयोग के कारण ये भारत को चीन पर तरजीह देंगे, व्यर्थ है। आणविक ईंधन की आपूत्तर्ि के मामले में स्पष्ट हो चुका है कि ये अमेरिका के दिशा-निर्देश पर ही काम करते हैं। चीन भी इनके लिए भारत जैसा ही आकर्षक बाजार है, और दक्षिणी गोलार्ध में इन्हें मलय देशों या हिंदचीन के राज्यों की तरह चीन का दबाव सीधा नहीं झेलना पड़ता। दक्षिण-पूर्व एशिया के देशों की तरह भारत के साथ इनके सदियों पुराने सांस्कृतिक संबंध भी नहीं।

ऑस्ट्रेलिया-न्यूजीलैंड को शामिल कर जिस चतुर्भुज का निर्माण करने का प्रस्ताव अमेरिका ने पेश किया है, वह इन सहायकों-संधिमित्रों के माध्यम से बिना चीन को चौकन्ना किए इस भूभाग तथा जलराशि में अपनी मौजूदगी को ही पुख्ता करने की कोशिश है। विडंबना यह है कि अपनी हाल की चीन यात्रा के दौरान जैसे नरम तेवर ट्रंप ने दिखलाए उनके मद्देनजर नहीं जान पड़ता कि चीन के साथ परोक्ष मुठभेड़ के लिए भी अमेरिकी सदर ने कमर कसी है। भारत को पाकिस्तान द्वारा निर्यात किए जा रहे आतंकवाद पर अंकुश लगाने के भरोसे पर भी उनके प्रशासन ने अमल नहीं किया है। अत: यह आश्वासन विश्वसनीय नहीं लगता कि "एक मार्ग एक मेखला' वाली चीनी परियोजना का मुकाबला एशिया प्रशांत चतुर्भुज कर सकता है। जापान के साथ भारत की सामरिक साझेदारी शिंजो एबे तथा मोदी की व्यक्तिगत मैत्री से ही नहीं हम दो देशों के सामरिक हितों के सन्निपात से भी दृढ़ हुई है। जापान उत्तर कोरिया को चीन के समर्थन-संरक्षण के कारण ही संकटग्रस्त है। दक्षिण कोरिया भी निरापद नहीं। पर भूराजनैतिक कारणों से आशा करना निर्मूल है कि भारत को एशिया-प्रशांत क्षेत्र में महत्त्वपूर्ण भूमिका सौंप कर अमेरिका या कोई दूसरा देश उसका कद बढ़ा सकता है। न भूलें कि आसियान कई दशक पुराना क्षेत्रीय संगठन है। इसमें भागीदारी की भारतीय कोशिशें "विशेष आमंत्रित सदस्यता-पर्यवेक्षक' की हैसियत तक ही सीमित रही है। इसका जन्म दक्षिण-पूर्व एशिया में साम्यवाद-चीन के प्रसार को रोकने के लिए ही अमेरिकी प्रेरणा से किया गया था। इसके सदस्यों में गंभीर मतभेद भी हैं। हिंदचीन के देश, म्यांमार, थाईलैंड मलय जगत का हिस्सा नहीं।

मलयेशिया, ब्रूनेई तथा इंडोनेशिया अपने पड़ोसियों से सिर्फ जातीय या भाषायी आधार पर ही नहीं धार्मिक मान्यता एवं सांस्कृतिक विरासत की दृष्टि से भी भिन्न हैं। यह सुझाना तर्कसंगत है कि इन देशों के साथ भारत की चेष्टा उभयपक्षीय रिश्तों को ही घनिष्ठ बनाने की होनी चाहिए। पर बात समाप्त करने के पहले रेखांकित करना जरूरी है कि एशिया-प्रशांत वाली शब्दावली हमें फिजूलखर्च मरीचिका में फंसा सकती है। शंका जायज है कि जैसे अमेरिका अफगानिस्तान से जान छुड़ाने के लिए भारत को वहां पठाना चाहता है, वैसे ही द. एशिया में उसका प्रभुत्व या वर्चस्व धुंधलाने के लिए उसे और बड़े मंच पर खर्चीली भूमिका के लिए प्रोत्साहित किया जा रहा है। भारत भौगोलिक लिहाज से प्रशांत सागर तटवर्ती नहीं और न ही इस क्षेत्र के साथ उसके ऐतिहासिक-सांस्कृतिक नाते ऐसे रहे हैं, जिन्हें सामरिक नजर से संवेदनशील समझा जा सकता हो। इसकी तुलना में मध्य एशिया, पश्चिम एशिया, ईरान तथा अरब जगत के साथ-साथ खाड़ी देश और पूरबी अफ्रीका हमारे लिए प्राथमिकता रखते हैं। विकल्प खुले रखना सराहनीय है, पर अपने राजनय की प्राथमिकता हमें स्वयं तय करनी होगी। दिलचस्प यह कि जो विश्लेषक अमेरिका के साथ हमारे विशेष संबंधों के पक्षधर रहे हैं, वे भी ट्रंप के आचरण को देख "नई गुटनिरपेक्षता' की बात करने लगे हैं! मोदी स्वयं इस दौरे के पहले पूरब की तरफ देखते रहने की जगह पूरब में कुछ करने का नारा दे चुके हैं। सोचने की बात यह है कि हम करना क्या चाहते हैं, कब और कहां? हिंद-प्रशांत क्षेत्र वाले चतुर्भुज का एक कोना चीन-जापान वाला भी है। क्या उसके रहते कल्पना की जा सकती है कि वह किसी दूसरे देश को मौका देगा कि उसके बढ़ते प्रभुत्व का प्रतिरोध करने का प्रयास करे? चीन को संतुलित करने के लिए जापान और दक्षिण कोरिया यथेष्ठ नहीं। इस दिशा में सार्थक प्रयास करना है, तो भारत-बांगलादेश-इंडोनेशिया-वियतनाम की धुरी का निर्माण जरूरी है। आबादी, प्राकृतिक संसाधनों व तकनीकी विकास के साथ-साथ अपने बाजार के आकार एवं सामरिक हितों के संयोग से ही चीन पर अंकुश लगाया जा सकता है। जाहिर है यह परियोजना अमेरिका को रास नहीं आ सकती। क्या हम सोच सकते हैं कि मनीला में मोदी भविष्य में किसी ऐसे सहकार की जमीन तैयार कर रहे थे?